CHETANA
International Journal of Education (CIJE)

Peer Reviewed/Refereed Journal
ISSN : 2455-8279 (E)/2231-3613 (P)

Impact Factor
SJIF 2024 - 8.445

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

उत्पादकीय क्रियाओं की पर्यावरण पर प्रभावशीलता : एक विवेचना

फूल चन्द महोलिया
शोधार्थी
डॉ. स्वाति बत्रा
शोध निर्देशक, अर्थशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर
Email: pcmaholia@gmail.com, Mobile-9413644681

First draft received: 05.04.2025, Reviewed: 18.04.2025
Final proof received: 11.05.2025, Accepted: 28.05.2025

सार–संक्षेप

उत्पादकीय क्रियाओं की पर्यावरण पर प्रभावशीलता के सिंहावलोकन के लिहाज से उपर्युक्त अध्ययन में संदर्भ विश्लेषणात्मक विधि से अध्ययन कर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि उत्पादन की गतिविधियों व पर्यावरण की धारणा अंतः सम्बन्धित है। पर्यावरण बिगाड़ की लागत पर उत्पादन की धारणा एक मंहगा व संकटकारी सौदा है। प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि पर्यावरण संरक्षण व सुधार के लिहाज से उत्पादकों की भूमिका व दायित्व एक महत्वपूर्ण उपागम है, जिसकी समझ व क्रियान्वयन से ही भावी पीढ़ी का भविष्य बचेगा, अन्यथा नही। समाधान के सार में प्रस्तुत शोधपत्र ने सतत–विकास की धारणा को महत्वगामी माना है, तथा निष्कर्ष स्थापित किया है कि पर्यावरण–मित्र धारणा के बिना सच्चा विकास संभव नही है।

मुख्य शब्द : *उत्पादकीय क्रियाएँ, पर्यावरण व परस्पर प्रभावशीलता*

प्रस्तावना

मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति व अपने विकास के लिए बहुत–सी आर्थिक क्रियाऐं करता है, उनमें से उत्पादकीय आर्थिक क्रियाऐं प्रमुख हैं। आज स्थिति यह है कि समग्र संसार में मानव निमित्त व मानव द्वारा बहुत भारी वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन किया जा रहा है। यक्ष सवाल यह हैं कि इन उत्पादकीय आर्थिक क्रियाओं के चलते जो सामाजिक लागतें बढ रही हैं, उनका क्या किया जायें ? मसलन उत्पादन से पर्यावरण व जैव विविधता को भारी संकटों का सामना करना पड़ रहा है। उत्पादकीय इकाईयों से बढ़ते प्रदूषण ने एक ओर

पर्यावरण क्षय की समस्या उत्पन्न की है, वहीं दूसरी ओर भावी पीढ़ियों के अस्तित्व तक को खतरा पैदा कर दिया है। इसी मुद्दे पर सम्पूर्ण विश्व समुदाय ने जून 1992 में ब्राजील में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन के अन्तर्गत आम सहमति प्रदान कर दी थी कि मनुष्य की आवश्यकता पूर्ति हेतु अर्थव्यवस्था में अनेक वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन होता है, जिसके चलते अनेक पर्यावरणीय बिगाड़ प्रत्यक्ष हो रहे हैं।[1]

जहाँ एक ओर मनुष्य की उत्पादकीय गतिविधियों ने अपने अपशिष्टों से पर्यावरणीय संकटों को चुनौतियां प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर उसके उचित प्रबन्धन की महती आवश्यकताओं को भी जन्म दिया है। इस सम्बन्ध में प्रो. जार्जेज ह्यूज (अध्यक्ष, विश्व जीवन गुणवता संस्थान पेरिस) ने प्रकृति के अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा पत्र के प्राक्कथन में व्यक्त किया है कि मानव जाति द्वारा भौतिक व जैविक सह अस्तित्व सिद्धान्त की अवमानना से पृथ्वी की जीवन धारण क्षमता को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया है।[2]

21वीं सदी के इस आधुनिक युग में मानव की आवश्यकताओं का दायरा इतना अधिक बढ़ गया है कि उनकी पूर्ति की दृष्टि से धरती माँ आज अपने आप को असहाय महसूस कर रही है। बढ़ता भौतिकतावाद, जनसंख्या वृद्वि एवं अविवेकशील उत्पादकीय क्रियाओं की अन्धी दौड़ में आज प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में तेजी आयी है, जिसके चलते आज का मनुष्य अपने जीवन को अनेक आयामों से खतरे में डाल रहा है। प्रायः इन खतरों की सामाजिक लागत व लाभार्जन की दृष्टि से मूल्यांकन नही होता है। किसी भी उत्पादकीय गतिविधि के लागत पहलू एवं लाभ पहलू पर विचार करने से पहले सामाजिक लागतों को अवश्य जोड़ना चाहिए, तभी इस तथ्य की जानकारी हो पायेगी कि अमुख उत्पादक किया लाभगत है या हानिगत है। अपने विकास की भूख के चलते मानव ने पर्यावरण को जो क्षति पहुँचायी है, उसके परिणामों को मनुष्य को ही भोगना है, इसमे कोई संदेह नहीं।

मानव की आर्थिक क्रियाओं से उत्पन्न पर्यावरणीय संकटों के सम्बन्ध में आर्थिक सहयोग व विकास संघ (OECD) के भूतपूर्व सचिव ए.वी. लीनिय कहते हैं कि हम जानते हैं कि '' विश्व में बढ़ती पर्यावरणीय विकृतियों की ओर सर्वप्रथम ध्यान परिस्थितिकीविदों (Ecologists) ने दिया था, किन्तु अब उतनी ही अधिक जिम्मेदारी व जवाबदायिता अर्थशास्त्रियों की है। उनके समक्ष आर्थिक क्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न पर्यावरणीय संकट एक चुनौती है''[3]

उपर्युक्त पृष्ठभूमि के आधार पर यह स्पष्ट हो रहा है कि पर्यावरणीय संकटों के पीछे मानवीय आर्थिक गतिविधियों का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष हाथ है, जिसमें से उत्पादकीय इकाईयों का पर्यावरण बिगाड़ की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। उदाहरण के तौर पर कारखानों के अपशिष्ट से उत्पन्न जल प्रदूषण व भूमि प्रदूषण, कारखानों की चिमनियों से वायुप्रदूषण व कारखानों के शक्ति के साधनों से उत्पन्न रेडियों एक्टिव प्रदूषण बहुतायत में प्रचलित है, अतः स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था की प्रमुख आर्थिक क्रिया उत्पादन, पर्यावरण व मानव स्वास्थ्य को भारी नुकसान पहुँचा रहा है। इस दुष्प्रभाव को रोकना ही कल्याणवादी अर्थशास्त्र की सच्ची धारणा है।

पर्यावरण व उत्पादकीय आर्थिक क्रियाओं की अवधारणा

मानव की सभी दिशाओं को आवृत करने वाले तत्वों के सामूहिक रूप को पर्यावरण कहा जाता है। ब्रिटेनी का विश्वकोष के अनुसार पर्यावरण शब्द जीवों को प्रभावित करने वाले समस्त भौतिक तथा जैविक परिस्थितियों के योग के रूप मे परिभाषित है। इसी प्रकार हर्स कोविट (Hers Kovits) के अनुसार पर्यावरण उन सभी भारी दशाओं व प्रभावों का योग है जो प्राणी या अवयवों के जीवन और विकास पर प्रभाव डालते हैं। फिटिंग का मानना है कि जीवों परिस्थितिकी कारकों का योग ही पर्यावरण है। सार के भार मे यह कहा जा सकता है कि जैविक व भौतिक तत्वों के मध्य पारस्परिक सम्यक् व सन्तुलित अन्तः सम्बन्ध एक परिस्थितिकी तंत्र बनाते हैं, जो पर्यावरण सन्तुलन का द्योतक है। इसी सन्तुलन में विसंगतियाँ व

बिगाड़ पैदा होते हैं, वही पर्यावरणीय संकटों के द्योतक हैं। प्रस्तुत अध्ययन में उत्पादकीय आर्थिक क्रियाओं से उत्पन्न पर्यावरणीय असन्तुलनों को परिभाषित किया जायेगा।

उत्पादकीय आर्थिक क्रिया से तात्पर्य उन उत्पादकीय गतिविधियों से हैं, जो आवश्यकता आपूर्ति हेतु सम्पादित हो तथा जिसका मौद्रिक माप व वैधानिक पक्ष अनिवार्य हो अर्थात उत्पादकीय क्रियाओं में उन सब मानवीय निर्णयों का समावेश है जो व्यष्टि व समष्टि आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु की जाती है।

उत्पादकीय गतिविधियों से उत्पन्न पर्यावरणीय संकटों का अवलोकन

उत्पादकीय गतिविधियों से उत्पन्न पर्यावरणीय संकटों का अवलोकन करने से पहले विकास व पर्यावरण के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों में निहित सम्भावनाओं तथा मूल्यों को समझना होगा। सम्भावनाओं का सम्बन्ध पर्यावरण के प्रति दृष्टिकोण से हैं तथा मूल्यों का सम्बन्ध उन क्रियाओं से है, जिनके द्वारा पर्यावरण और विकास में

सन्तुलन को सम्भव बनाये रखा जा सकता है। पर्यावरण और विकास के सम्बन्ध में प्रदूषण, विकास प्रक्रिया का अकार्यात्मक परिणाम है। यद्यपि समाजशास्त्री दृष्टिकोण से विकास की अकार्यात्मक दृष्टिकोण को नकारा गया है, किन्तु आज विश्व के विकसित देश व विशेषकर विकासशील देशों ने विकास के जिस प्रारूप को अपनाया है, उसके परिणाम का अधिकांश हिस्सा पर्यावरण को लगातार क्षति पहुँचा रहा है।

स्पष्ट है कि विकास की अन्धी दौड़ में प्रकृति का जिस प्रकार व जिस गति से दोहन किया जा रहा है तथा त्वरित विकास के चलते जो उत्पादन किये जा रहे हैं या यों कहे कि जो परियोजनाएं बनायी जा रही है, उनके कारण विकास के नये मानदण्डों को छू लिया है, लेकिन साथ ही साथ एक प्रदूषित विश्व की रचना भी कर डाली है। विकास के प्रत्येक चरण ने मानव को प्रदूषित वातावरण दिया है। मानव ने विकास में पर्यावरण मित्रता के दृष्टिकोण की अनदेखी कर, आज सम्पूर्ण प्रकृति को असन्तुलित चक्र में डाल, बड़े पर्यावरणीय संकटों को जन्म दे दिया है, जिसका कोई निदान मानव के समक्ष कम से कम आज तो नही है।

मानव की विकास को लेकर उच्च प्रत्याशाओं ने अनेक अविवेकशील निर्णयों को जन्म दिया, जिसके चलते नाना प्रकार के पर्यावरणीय संकट उत्पन्न हो गये। बढ़ती जनसंख्या के कारण रोजगार, उत्पादन के क्षेत्र में दबाव बढ़ा, फलस्वरूप साधनों का अनुचित दोहन व अनीतिगत औद्योगिकरण को बढावा मिला, जिसके कारण अनेक पर्यावरणीय प्रदूषणों को जन्म मिलता गया। प्रायः इस सामाजिक लागत व आर्थिक विकास का, '' लागत व लाभार्जन '' की दृष्टि से मूल्यांकन नही होता। किसी भी आर्थिक गतिविधि के लागत पहलू एवं लाभ पहलू पर विचार करने से पूर्व सामाजिक लागतों को अवश्य जोडना चाहिए, तभी इस तथ्य की जानकारी हो पायेगी कि अमुख आर्थिक क्रिया लाभदायक है एवं अमुख आर्थिक क्रिया हानिगत है। पर्यावरणीय संकटों का सम्बन्ध केवल प्राकृतिक व व्यवहारिक विज्ञानों से ही नही है, बल्कि मानव विज्ञानों से भी इसका गहरा सम्बन्ध है। मानव की आर्थिक क्रियाओं से, विशेषकर उत्पादकीय क्रियाओं से पर्यावरणीय संकटो का जो उच्च स्वरूप बना है, उसकी बानगी इस प्रकार है :–

- कारखानों के अपशिष्ट पदार्थो से उत्पन्न जल प्रदूषण।
- कारखानों की चिमनियों व यातायात के साधनों से उत्पन्न वायुप्रदूषण,
- ग्रीन हाउस प्रभाव, तेजाबी वर्षा एवं भू–तापन आदि।
- विकास की परियोजनाओं के कारण पर्यावरण क्षय मसलन नदी घाटी परियोजना, औद्योगिक परियोजनायें, तापी विद्युत परियोजना आदि।
- औद्योगिक बस्तियों के कारण संस्कृति एवं सामाजिक प्रदूषण।
- उत्पादन पैकेजिंग में प्लास्टिक के प्रयोग से भू–प्रदूषण।
- अधिक लाभ की प्रेरणा से हुई मिलावट के चलते जैव–विविधता व स्वास्थ्य पर दूष्प्रभाव।
- अधिक उत्पादकता की दृष्टि से रसायनिक प्रयोगों के चलते जैव–विविधता व अनेक स्वास्थ्य सम्बन्धी संकट पैदा होना।

उपर्युक्त आधार पर हम कह सकते हैं कि आज प्राथमिक क्षेत्र में उत्पादन आधिक्य के लिहाज से कृषि में रासायनिक खादों व दवाईयों का प्रयोग, वनों का अत्याधिक दोहन व अनियंत्रित खनन ने जहॉ एक ओर पर्यावरणीय संकटों को खड़ा किया है, तो वहीं दूसरी ओर जैव–विविधता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्याओं को भी जन्म दिया है। द्वितीय क्षेत्र उद्योगों के अपशिष्ट ने अनेक प्रदूषणों को जन्म दिया है अर्थात भूमि से लेकर आकाश तक सभी को प्रभावित किया है। तृतीय व सेवा क्षेत्र ने यातायात, विनिमय आदि की प्रक्रियाओं से अनेक प्रदूषणों व अनैतिकताओं को जन्म दिया है, मसलन मिलावट, प्लास्टिक–कचरा आदि।

उत्पादकीय आर्थिक क्रियाओं से उत्पन्न पर्यावरण संकट एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव

उत्पादन की प्रगति ने जो मार्ग अभी अपनाया है, वह सतत– विकास धारणा से कोसों दूर है, आज के लाभ व पूर्ति के लिहाज़ से अविवेकशील उत्पादकीय गतिविधियों ने जो संकट पैदा किये हैं, उन्हे अग्रतालिका से प्रदर्शित किया जा रहा है:–

उत्पादकीय आर्थिक कियायों से उत्पन्न पर्यावरणीय संकट एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव

आर्थिक किया	पर्यावरणीय संकट	स्वास्थ्य पर प्रभाव
उत्पादन	– जीवांश्म ईंधन (लकडी,कोयला, तेल) के दहन से वायू प्रदूषण। – आणविक ईंधन से रेडियों एक्टिव प्रदूषण। – उद्योगों की चिमनियों से निकलने वाली गैस – कार्बन डाइ ऑक्साइड, मिथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, ग्लोरो–फ्लोरो कार्बन आदि से वायु प्रदूषण, भू–तापन, ग्रीन हाउस प्रभाव, तेजाबी वर्षा जैसी समस्याएं उत्पन्न। – कागज, चमडा, रंगाई–छपाई, रसायन, खाद्य विनिर्माणी उद्योगों से भारी जल व भूमि प्रदूषण। – कृषि में कीटनाशक व रासायनिक खाद आदि के प्रयोग से जैव संकट। – पैट्रोलियम परिशोधन, विद्युत ऊर्जा संयंत्रों तथा धातु प्रागलक उद्योगों द्वारा उत्पन्न जल प्रदूषण। – बूचड़खानों के अपशिष्ट। – कारखानों की मशीनों व यातायात के साधनों से ध्वनि प्रदूषण।	सांस की बीमारियां (ब्रोंकाइटिस, इम्फीसिया) चर्म कैंसर, मोतियाबिन्द, कफ, खांसी, टीबी, अतिसार, टाइफाइड, पीलिया, आंतरोग, हड्डियों में विकृति, त्वचारोग, उच्च रक्त चाप, मानसिक स्मरण, शक्ति का हास, बहरापन (पूर्ण व आंशिक) अनिद्रा, चिड़चिड़ापन, निराशा।

इसी प्रकार उत्पादकीय विकास परियोजनाओं ने भी पर्यावरणीय प्रदूषणों को जन्म दिया है। परियोजनाएं चाहे जिस प्रकार की हो, उनका अन्तिम लक्ष्य मानव हितों की पूर्ति करना है, न कि पर्यावरण हितों की रक्षा करना है। कहने का तात्पर्य यह है कि परियोजनाओं का ढाँचा सतत–विकास की धारणा या पर्यावरण–मित्रता के दृष्टिकोण पर आधारित होना चाहिए, जो कि आज नही दिखायी पड़ रहा है, फलतः पर्यावरणीय दूष्प्रभाव जन्म ले रहे हैं, जिन्हे अग्रतालिका से स्पष्ट किया जा रहा है:–

विकास परियोजनाओं के पर्यावरणीय दुष्प्रभाव

विकास परियोजनाएं	पर्यावरणीय संकट
(1) कृषि विकास परियोजनाए (2) नदी घाटी परियोजनाएं	– कृषि जैव विविधता को खतरा – रसायनिक खादों से धरती की उर्वराशक्ति का ह्रास – कीटनाशक दवाओं के प्रयोग से जैव विविधता को खतरा – वन्य जीवन प्राकृतवास का नाश – भूमि क्षय – जैव विविधता का क्षय – क्षारीयता एवं अम्लता की समस्या – भू–तल अस्थिर होने से भूकम्प की आशंका – जन–जातियों का विस्थापन – जल जन्य बीमारियों का उदय
(3) उत्खनन	– भूमि क्षय एवं भूमि प्रदूषण

परियोजनाएं	– भूतल एवं भूजल संसाधनों का प्रदूषण – वन विनाश एवं वन्य जीवन प्राकृतवास की क्षति – वायु प्रदूषण – ऐतिहासिक व धार्मिक स्मारकों व शिलालयों पर प्रभाव
(4)तापीय विद्युत परियोजनाएं	– वायु प्रदूषण (ईधन के दहन से सल्फर–डाइ–ऑक्साइड, नाईट्रोजन के आक्साइड्स एवं कार्बन–डाइ–ऑक्साइड बडी मात्रा मे निकालते है।) – जल प्रदूषण (तापीय विद्युत संयत्रों से निकलने वाला दूषित जल भी जीवन के लिए घातक है।) – उड़न राख (Fly Ash) की समस्या सर्वाधिक घातक है। – रेडियों एक्टिव प्रदूषण। – भूमि क्षय एवं पुनार्वास की समस्या
(5) यातायात व संचार परियोजनाएं	– बड़े शहरों मे वायु प्रदूषण। – ध्वनि व शोर की समस्या – सड़क निर्माण व खम्भों के निर्माण से कृषि योग्य भूमि का बर्बाद होना। – वाहनों के कारण शहरों मे संकीर्णता (Congestion) समस्या बढ़ी
(6) औद्योगिक परियोजनाएं	– प्राकृतिक संसाधनों के अविवेकपूर्ण दोहन की समस्या – अपशिष्टों से वायु, जल एवं भूमि प्रदूषण की समस्या – सामाजिक प्रदूषण, आवास समस्या एवं अपराधों मे वृद्धि।

पर्यावरण सुधार में उत्पादकों की भूमिका व दायित्व

उत्पादकीय आर्थिक क्रियाओं में सामायिक लागतों का विशेष महत्व होता है। इस लिहाज से उत्पादकों को उत्पादन की एवज में समाज को कम से कम नुकसान हो, इस तथ्य का ध्यान रखा जाता है अन्यथा उत्पादक दुष्प्रभावों को सामाजिक लागतों के तौर पर वहन करना होगा। अतः उत्पादकों को वस्तुओं का उत्पादन करते समय जैव विविधता एवं पर्यावरण संकटों को केन्द्र में रख कर, उत्पादन करना होगा अर्थात उत्पादकों का यह दायित्व है कि न्यूनतम पर्यावरण बिगाड़ नीति पर कार्य करते हुए उत्पादनों को दिशा देनी होती है। प्रत्येक उत्पादक का यह दायित्व है कि वह पर्यावरण की अवधारणा, प्रबन्धन, डिजाईनिंग, कानून पक्ष, न्यायिक सक्रियता, पर्यावरण मित्र मॉडल, जन चेतना, सामाजिक हित एवं संरक्षण के उपाय अनिवार्य रूप से अपनी उत्पादन प्रक्रिया में लागू करे। सार के भार में यह कह सकते हैं कि पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि उत्पादकों की भूमिका एक सामाजिक ट्रस्टी के रूप में होती है, जिसे समाज व समाज से जुड़े मुद्दों को सुरक्षित रखते हुए, अपने उत्पादन की दिशा तय करनी होगी अर्थात उत्पादकीय प्रक्रिया किसी प्रकार की सामाजिक हानि को पैदा न करें, फिर वह मुद्दा पर्यावरण का ही क्यो न हो।

निष्कर्ष :–

उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष स्थापित होता है कि वर्तमान दौर के पर्यावरणीय– संकटों के निवारण व प्रबन्धन तथा आने वाले सुन्दर प्राकृतिक कल के लिए समग्र विश्व की अर्थव्यवस्थाओं को अपनी आर्थिक क्रियाओं को पर्यावरण–मित्र बनाना होगा, अर्थात सतत–विकास की धारणो को आवश्यक रूप से सभी उत्पादकों को धारित करना होगा, साथ ही प्राकृतिक संसाधनो का दोहन भावी पीढ़ी के भविष्य व हितों को ध्यान मे रखकर करना होगा, तब जाकर कही सुचित आर्थिक जगत का उदय होगा। आर्थिक गतिविधियों से उत्पन्न पर्यावरणीय संकटों का आंकलन अर्थव्यवस्था का अनिवार्य पक्ष है, जिसके आधार पर ही लागत व लाभार्जन का दृष्टिकोण निर्धारित होगा। पर्यावरणीय हितों को दरकिनार कर उत्पादकीय गतिविधियों का संचालन एक प्रकार से समग्र विकास की धारणा पर कुठाराघात करता है, अतः आर्थिक क्रियाओं का, विशेषकर उत्पादकीय क्रियाओं का पर्यावरण–मित्र होना, आज की सबसे बडी जरूरत है.

संदर्भ ग्रन्थ

- लोढ़ा, जितेन्द्र कुमार, ''आर्थिक क्रियाओं का पर्यावरण तथा जैव विविधता पर प्रभाव एवं विद्यालयों की भूमिका, '' भारतीय आधुनिक शिक्षा, वर्ष–24, अंक–1, एन.सी.आर.टी. नई दिल्ली, जुलाई–2005, पृं. सं. 61–74।
- कपूर डा. खेमचंद, 2002. ''एनवायर्नमेंटल अवेयरनैस एवं एटिट्यूड टूवर्डस एनवायर्नमेंटल एजुकेशन इन रिलेशन ऑफ सोशियों – इकोनोमिक स्टेटस ऑफ स्टूडैंटस एण्ड टीचर्स ऑफ 10+2 स्कूल्स ऑफ अरूणाचल प्रदेश, '' पी.एच.डी. शिक्षा, अरूणाचल विश्वविद्यालय।
- चैबेलू आर.एम. 2004. '' क्वालिटी मैनेजमेंट इन इंडियन एकैडेमिन्स– इम्पेक्ट ऑफ कॉस्ट एण्ड ऑटोनोमी फैक्टर्स, इफेक्टिव एक्जीक्यूटिव, '' दि आई.सी.एफ.ए.आई., यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद।
- सक्सेना डॉ. हरिमोहन, 2003. '' पर्यावरण अध्ययन '' अग्रवाल साहित्य भवन, श्री गंगानगर, राजस्थान।
- वैश्य, एम.सी. एवं शर्मा शंकरलाल, 1998. '' व्यष्टि व समष्टि आर्थिक सिद्धान्त, '' जयपुर पब्लिशिंग हाउस, जयपुर।